वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वेद प्रकाश

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः ५ रुपये नवम्बर २०१४

कुल पृष्ठ संख्या २०, वजनः 40 ग्राम
प्रकाशन तिथिः 4 नवम्बर 2014

अन्तःपथ

वेद के पाठक सावधान! (श्री शिवनारायण सिंह गौतम लिखित पुस्तक से उद्धृत)	३ से १०
दृष्टान्त समुच्चय से उद्धृत (पं. शिवशर्मा उपदेश कृत)	१० से १४
हमारे चार नये अंग्रेजी प्रकाशन (समीक्षक : डॉ. भवानीलाल जी भारतीय)	१४ से १६
पुस्तक समीक्षा– महर्षि दयानन्द की जरूरत क्यों : सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति आश्वस्ति समीक्षक : *संजय शुक्ल*	१६ से १८

सबसे अलग बनें। आप सबसे अलग गुणों वाले ही जन्म थे, तो किसी की 100 प्रतिशत नकल क्यों करें। असली सबसे अलग बनकर ही करें, नकली बन कर नहीं।

-स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक

बालकों की कामना

हे ईश्वर वरदान दो।
काया यह बलवान् हो।।
ठीक समय पर जगना सोना।।
पढ़ने का ही ध्यान हो।।
परहित जीना, परहित मरना।
मन में यह अरमान हो।।
पाप कपट से दूर रहूँ मैं।
मेरी यह पहचान हो।।
दुर्गुण दूर भगा दो ईश्वर।
मति सभी गुणवान हो।।
भला करूँ मैं दीन दुखी का।
मेरा भी कल्याण हो।।
सोच समझकर आगे निकलूँ।
इतना मुझको ज्ञान हो।।

घर-घर में उजाला हो

लुटाओ वेद का सद्ज्ञान, घर-घर में उजाला हो।
भला हो दीन दुखियों का, ऋषि का बोल बाला हो।।
हनन हो हीन भावों का, सभी का लक्ष्य ऊँचा हो।
सरल व्यवहार हो सबका, चलन अपना निराला हो।।
करें सब ईश की पूजा, प्रभु है एक न दूजा।
तरेगा पार वह जग से कि व्रत जिसने यह पाला हो।।
तनिक देखो नरक जग है, चहूँ दिश भय प्रलोभन है।
स्वर्ग की एक ही सीढ़ी, कि मन अपना सम्भाला हो।।
यही सांचा है जीवन का,
निराली देन ऋषियों की।
सफल होगा वही जीवन,
जो इस सांचे में ढाला हो।।

रचयिता:-राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

वेदप्रकाश

संस्थापक : **स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द**

वर्ष ६४ अंक ०३ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, नवम्बर, २०१४

सम्पा॰ **अजयकुमार** पूर्व सम्पादक : स्व॰ **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती**

ओ३म्

वेद के पाठक सावधान!

श्री शिवनारायण सिंह गौतम कृत

उपरोक्त पुस्तक से उद्धृत

सायण की ऋषि सम्बन्धी मान्यता भी भ्रमपूर्ण है। मंत्रों के आरम्भ में उल्लिखित ऋषियों को ऐतिहासिक न मानकर मन्त्र के अर्थ में सहायक मानना अथवा वेद-मन्त्रों को अपौरुषेय मान करके भी, मन्त्रों के अन्तर्गत आये हुए वसिष्ठादि शब्दों को व्यक्ति विशेष मानकर मंत्र का अर्थ करना इत्यादि परस्पर विरुद्ध मान्यताएं सायण के भाष्य में मिलती हैं। महर्षि दयानन्द ने इस भाष्य की मौलिक त्रुटियों को बहुत ही गंभीरता से समझा।

उदाहरणस्वरूप ऋग्वेद सातवें मण्डल के लगभग एक सौ सूक्तों के ऋषि वसिष्ठ हैं। इसी मण्डल के ३३वें सूक्त के ग्यारहवें मन्त्र का सायण द्वारा किये गये भाष्य का नमूना देखिए। भाष्य से पहले सायण अपने स्वभावानुसार पौराणिक कथा आरम्भ करके मन्त्र का अर्थ करते हैं।

पुराणों में उर्वशी को नारायण मुनि के ऊरु (जंघाओं) से उत्पन्न बताया गया है। सर्वप्रथम तो 'ऊरु' को 'उरु' मानकर किया गया निर्वचन और इस पर आधारित उर्वशी की उत्पत्ति की कथा दोनों अशुद्ध हैं क्योंकि ऊरु (जंघा) के अर्थ में उरु का प्रयोग सम्पूर्ण संस्कृत वाङ्मय में कहीं नहीं मिलता। वृहद्देवता की कथा सायन को बहुत प्रिय है। यह बाल्मिकीयरामायण में भी ज्यों की त्यों पायी जाती है। वृहद्देवता के अनुसार उर्वशी के दर्शन पर मित्र एवं वरुण का रेतस (वीर्य) कुम्भ में गिर पड़ा और मुहूर्त मात्र में अगस्त्य तथा वसिष्ठ ऋषि उत्पन्न हो गये। तत्पश्चात् उर्वशी पुरुरवा पर आसक्त हो गयीं और कालान्तर में इन दोनों से आयु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। इस अश्लील एवं फूहड़, बेहूदी कथा का मूल ऋग्वेद

के जिन मन्त्रों में सायणाचार्य के द्वारा बताया गया है, वह इस प्रकार है–

निम्न मंत्रों में सायण के भाष्य के अनुसार वसिष्ठ के पुत्रगण अपने पिता वशिष्ठ का गुणगान करते हुए भरतवंशी लोगों (जिनका राजा सुदास था) से स्वागत करने के लिए कह रहे हैं–

1. उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन्मनोऽधिजात।
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा देव्येन विश्वे देवाः पुष्करे त्वाददन्त।।[1]

अर्थ–ये ऋषि वसिष्ठ मित्र वरुण के पुत्र हैं। ये ब्रह्मन् उर्वशी के मन से उत्पन्न हुए हैं। इनको दिव्य मंत्रों के साथ विश्वदेवों ने पुष्कर (वर्तमान पुष्कर क्षेत्र) में धारण किया था अर्थात् उत्पन्न किया था।

2. स प्रकेत उभयस्य प्रविद्वान्त्सहस्र दान उतबा सदानः।
यमेन ततं परिधिं वयिष्यन्नप्सरस परिजज्ञे वसिष्ठ।।[2]

अर्थः–ये वसिष्ठ दोनों लोकों के समस्त विषयों के विद्वान हैं। सहस्त्रों प्रकार के दान देने वाले हैं। सर्व नियामक द्वारा विस्तारित ताने-बाने को बुनने की इच्छा से ये उर्वशी से उत्पन्न हुए हैं।

3. सन्ने ह जाताविषिता नमोभिः कुम्भे रेतः सिषिचतुः समानम्।
ततो ह मान उदियाय मध्यान्ततो जातमृषिमाहुर्वसिष्ठ।।[3]

अर्थ–दोनों मित्र और वरुण ने एक साथ अपना रेतस अर्थात् वीर्य कुम्भ में स्थापित किया। उसी से मान (अगस्त्य) उत्पन्न हुए और उसी से वसिष्ठ भी उत्पन्न हुए कहे जाते हैं।

4. उक्थमृतं साममृतं विभर्त्ति ग्रावाणं बिभ्रत्प्र बदात्यग्रे।
उपैनमाध्वं सुमनस्यमाना आ वो गच्छाति प्रतृदो वसिष्ठः।।[4]

अर्थः–हे भरता (भतवंशी लोगों)! ये वसिष्ठ ऋषि आप लोगों के पास आ रहे हैं। आप सब प्रसन्न मन से इस माननीय का सत्कार करें। वसिष्ठ उक्थ सामगान करने वालों एवं सोम रस तैयार करने वालों का उचित नेतृत्व करेंगे।

नोटः–सायणाचार्य ने उपर्युक्त सूक्त के मंत्रों का भाष्य निम्नलिखित पौराणिक कथाओं के आधार पर किया है जो द्रष्टव्य हैं–

सूक्त की पौराणिक कथा (सुविधा के लिए)–

जिस कथा के आधार पर सायण इस सूक्त में मंत्रों की व्याख्या करता है, वह

1. ऋग्वेद, 7-33-11
2. ऋग्वेद, 7-33-12
3. ऋग्वेद, 7-33-13
4. ऋग्वेद, 7-33-14

कथा वृहद्देवता एवं बाल्मिकीय रामायण बालकाण्ड के सर्ग संख्या ५६ एवं ५७ में द्रष्टव्य है। बाल्मिकीय कथा के बहुत पश्चात् वृहद्वेता की कथा लिखी गयी है। दोनों कथायें एक ही समान हैं।

वरुण लोक में वरुण एवं मित्र साथ-साथ रह रहे थे। उसी समय में अप्सरा उर्वशी सखियों से घिरी हुई अकस्मात् उस स्थान पर आ पहुँची। सुन्दरी अप्सरा को क्षीरसागर में स्नान करती हुई एवं जल-क्रीड़ा करती देखकर मन में उल्लास प्रकट हुआ। उन्होंने उर्वशी को समागम के लिये प्रेरित किया। उर्वशी ने हाथ जोड़कर वरुण से कहा–"सुरेश्वर! साक्षात् मित्र देवता ने पहले ही मेरा वरण कर लिया है।" वरुण ने कहा–"यदि तुम समागम करना नहीं चाहती हो तो तुम्हारे सामने ही यह देव निर्मित जो कुम्भ है, उसी में मैं अपना वीर्य छोड़ देता हूँ। इस प्रकार वीर्य छोड़कर सफल मनोरथ हो जाऊँगा।" वरुण का यह वचन सुनकर उर्वशी को बड़ी प्रसन्नता हुई–"प्रभो! आपकी इच्छानुसार ऐसा ही हो। मेरा हृदय विशेष आपमें अनुरक्त है। इसलिये आप मेरे उद्देश्य से इस कुम्भ में वीर्याधान कीजिए। इस शरीर पर तो इस समय मित्र का अधिकार हो चुका है।" तब वीर्य को उस कुम्भ में डाल दिया। उसके पश्चात् मित्र के पास गयी। मित्र कुपित होकर उर्वशी से बोले–"तूने पहले मुझे वरण किया, फिर दूसरे को। अतः इस पाप के कारण मनुष्य लोक में जाकर निवास कर। दुर्बुद्धे! बुद्ध के पुत्र 'पुरुरवा' के पास चली जा।" तब प्रतिष्ठानपुर प्रयाग (वर्तमान इलाहाबाद के पास झूसी) में पुरुरवा के पास चली गयी। पुरुरवा से आयु नामक पुत्र और आयु से राजा नहुष (चन्द्रवंशी) पैदा हुए। ५७ श्लोक संख्या ४ में मित्र और वरुण के तेज से युक्त जो वह प्रसिद्ध कुम्भ था, उससे दो तेजस्वी ब्राह्मण उत्पन्न हुए। वह मित्र के तेज से अगस्त्य तथा वरुण और मित्र के तेज से युक्त वसिष्ठ हो गये।

कथा की विश्वसनीयता पर प्रश्न–कुम्भ से उत्पन्न इस अश्लील पौराणिक कथा को वेद मंत्र का आधार बनाना सायण के लिये कहाँ तक उचित था? इस कथा से इस वेद मंत्र का कोई सम्बन्ध नहीं है। प्रथम तो कुम्भ से उत्पन्न होने से अगस्त्य कुम्भज ऋषि के नाम से जाने जाते हैं तो पुनः साथ ही उसी कुम्भ से उत्पन्न वशिष्ठ को क्यों नहीं आज तक किसी ने कुम्भज कहा? ऐसी कल्पित कथा को वेद मंत्र पर आरोपित करना कहाँ तक ठीक था?

अति आवश्यक समीक्षा–

१. जब वशिष्ठ, विश्वामित्र, अगस्त्य आदि उत्पन्न भी नहीं हुए थे उस समय भी, यहाँ तक कि आदि राजा महाराज मनु से भी पूर्व चारो वेद थे। महाराज मनु

स्वयं कह रहे हैं–

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयः ब्रह्म सनातनम्।

दुदोह यज्ञ सिद्धर्थमृग्यजुः सामलक्षणम्।। (मनु०, अध्याय १)

२. मनु के सबसे छोटे पुत्र नाभानेदिष्ठ के नाम से ऋग्वेद के दशवें मण्डल का ६१वाँ एवं ६२वाँ सूक्त आज भी जाना जाता है, उन सूक्तों के वे ऋषि हैं अर्थात् दोनों सूक्तों के मन्त्रों के अर्थों के द्रष्टा आज भी वही माने जाते हैं।

प्रमाण–

तैत्तिरीय संहिता (३/१/९), मैत्रायणी संहिता (१/५/८) तथा ऋग्वेद का व्याख्यान ग्रन्थ इतरा के पुत्र ऐतरा ऋषि का ऐतरेय ब्राह्मण (५/१४)-इन तीनों में इन दोनों सूक्तों के ऋषि महाराज मनु के छोटे पुत्र नाभानेदिष्ठ के नाम से ही लिखे गये हैं जो आज भी उसी नाम से जाना जाता है। मंत्र तो मनु से भी पूर्व में थे। यह मंत्रों के रचयिता नहीं बल्कि मंत्रों के अर्थ को प्रकाशित करने वाले हैं अर्थात् मंत्र-स्रष्टा नहीं, मंत्र-द्रष्टा हैं। मंत्रों के ऊपर जिन ऋषियों का नाम लिखा है वे ऋषि मंत्रों के रचयिता नहीं हैं, वे तो मंत्रों के अर्थ को प्रकाशित करने वाले हैं। जिस ऋषि ने जिस-जिस मंत्र का अर्थ प्रकाशित किया, उन अर्थों के लिए आज तक उनका नाम लिखा हुआ है।

परन्तु दुःख इस बात का है कि सायणाचार्य भी स्वयं अपने वेद-भाष्य भूमिका के प्रारम्भ में ही यह स्वीकार कर चुके हैं कि–

१. 'तस्माद्यज्ञातसर्वहुत ऋच सामानिः।'

अर्थात् उस परमेश्वर से सृष्टि के आदि में ऋग्वेद, यजुः, साम तथा अथर्व उत्पन्न हुए।

२. 'शास्त्रयोनित्वात्'[१]

३. 'अत एव च नित्यत्वम्'[२]

अर्थात् वेद का ज्ञान नित्य तथा सत्य है क्योंकि इसका कारण ब्रह्म ही है और वेद ज्ञान प्रदीप की भाँति समस्त विद्याओं का प्रकाशक है। प्रत्येक सृष्टि के आरम्भ में परमेश्वर इसी वेद ज्ञान को बीजांकुर न्याय से प्रकाशित करता है। उपर्युक्त को अपनी वदेभाष्य भूमिका में लिखकर स्वीकार करने वाला सायणाचार्य वेद का भाष्य करते समय पौराणिक गाथाओं के भूत से भ्रमित होकर सन्निपात रोग से पीड़ित रोगी की भाँति अब-बक लिखना प्रारम्भ कर देता है। उसे अपनी पूर्व प्रतिज्ञा का थोड़ा भी स्मरण नहीं है कि 'मैं परमेश्वर द्वारा सृष्टि के आदि में दिये गये ईश्वरीय अपौरुषेय ज्ञान का भाष्य कर रहा हूँ; न कि इतिहास एवं पुराण की

1. ब्रह्मसूत्र, 1/1/3, वेदव्यास

2. ब्रह्मसूत्र 1/3/29, वेदव्यास

बेहूदी एवं भौड़ी कथा लिख रहा हूँ।

एक साधारण व्यक्ति भी जानता है कि किसी भी घटना या व्यक्ति का इतिहास, उसके जन्म-मरण या घटना घटित होने के पश्चात् का होता है, उससे पहले का नहीं। यदि उक्त नाम व्यक्ति-विशेष, ऋषि विशेष या राजा विशेष या किसी वंश-विशेष के हैं, तो प्रश्न उठता है कि उनके जन्म से करोड़ों वर्ष पूर्व के ऋग्वेदादि ग्रन्थों में (१) वशिष्ठ, (२) अगस्त्य, (३) अप्सरा उर्वशी, (४) वशिष्ठ के पुत्रगण, (५) भारतों अर्थात् भरतवंशियों तथा (६) राजस्थान में स्थित पुष्कर नामक वर्तमान तीर्थस्थान में वशिष्ठ की जन्म लेने का बात कहाँ तक सम्भव है? इस पर सायणाचार्य को विचार करना चाहिए था; पर उसने विचार नहीं किया। यह ईश्वरीय ज्ञान अपौरुषेय वेद के भाष्य सम्बन्धित सायणाचार्य की अज्ञानता का सजीव उदाहरण है। इसे कोई स्वीकार नहीं कर सकता है। क्या इस प्रकार का भाष्य एक चरवाहे या गड़ेरी की कथा से कम है? सायण ऊपर स्वयं अपनी वेद-भाष्य की भूमिका में स्वीकार करता है कि वेद तो अपौरुषेय ईश्वरीय ज्ञान है; परन्तु यह भाष्य की भाष्यकर्त्ता को गड़ेरी सिद्ध करता है। सायण के भाष्य को यदि सभी भाषाओं में अनुवाद करके संसार के सभी विद्यालयों में रख दिया जाय तो यह कथन कि 'वेद गड़ेरियों का गीत है'—कोई स्वीकार नहीं कर सकता। उपर्युक्त उन्हीं मंत्रों का स्वामी दयानन्द का भाष्य देखें।

स्वामी दयानन्द का भाष्य

पूर्व इसके कि मैं पूर्वोक्त इन्हीं मन्त्रों के दयानन्द सरस्वती द्वारा किये गये अर्थ का वर्णन करूँ, एक बार महाभारतकालीन आचार्य यास्क (वेदार्थ प्रणाली के जन्मदाता एवं निरुक्त तथा निघण्टु के रचयिता एवं प्रणेता) के वेद-भाष्य सम्बन्धी आदेश एवं निर्देश को उद्धृत करना अति आवश्यक समझता हूँ जिसमें उन्होंने अपने से बहुत प्राचीन काल के सम्भवत: अपने से भी हजारों वर्ष पहले जन्म लेने वाले व्याकरण के आचार्य शाकटायन का उल्लेख करते हुए वेदभाष्य की सर्वप्रथम शर्त रखी है—'वेद का कोई भी संज्ञावाची शब्द या पद रुढ़ि अर्थों के वाचक न होकर यौगिक हैं।'

'नामान्याख्यातजानीति शाकटायनो निरुक्त समयश्च सर्वाणीति'[१]

अर्थात् वैयाकरण शाकटायन मुनि तथा सभी निरुक्त शास्त्र के पूर्व आचार्यों का मत है कि वेदों के संज्ञावाची शब्द (नामवाले शब्द) धातुज अर्थात् किसी

1. निरुक्त 1/4/1

व्यक्ति-विशेष या स्थान-विशेष के वाचक नहीं हैं। धातुओं के भिन्न-भिन्न अर्थ होने के कारण वैदिक संज्ञाओं के अनेक अर्थ होते हैं। निरुक्त शास्त्र के इस सिद्धान्त से जाना जाता है कि वेदों में किसी मानवीय घटना, व्यक्ति-विशेष, स्थान-विशेष या किसी मानवीय इतिहास-विशेष का वर्णन नहीं है।

दयानन्द का अर्थ–अब हम देखते हैं कि ऋषि दयानन्द मध्यकालीन आचार्य सायण (जो आज से लगभग छः सौ वर्ष पूर्व मुहम्मद तुगलक के काल में १३२४ ई० में उत्पन्न हुए और फिरोज तुगलक के समय में वह विजयनगर के राज्य में २९ वर्ष की आयु में १३५३ ई० में बुक्का का प्रधानमंत्री बना।) की भाँति किसी पौराणिक गाथा तथा किंवदन्तियों के चक्कर में न पड़कर प्राचीन ऋषियों की परम्परा का पालन करते हुए महाभारत से भी पूर्व के आचार्य यास्क मुनि के निरुक्त, निघण्टु के आधार अर्थ करते हैं। यह अर्थ युक्ति सिद्ध है, ईश्वरीय ज्ञान के अनुकूल है, किसी व्यक्ति या किसी घटनापरक नहीं है तथा साथ ही साथ पुराण या इतिहास की घटनापरक भी नहीं है।

नोट–पाठक सायण के अर्थ और दयानन्द के भाष्य को तुलनात्मक दृष्टि से एक बार पुनः देखें जो पीछे दिया गया है।

मंत्र संख्या ११

उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन्मनोऽधिजात।
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा देव्येन विश्वे देवाः पुष्करे त्वाददन्त॥११॥

पदार्थ=हे (ब्रह्मान्) समस्त वेदों को जानने वाले (वशिष्ठः) पूर्ण विद्वान जो (मैत्रावरुणः) प्राण एवं उदान के वेत्ता आप (उर्वश्याः) अन्तःकरण के द्वारा विशेष विद्या से (उत)=और (मनसः) मन से (अधिजातः) अधिकतर उत्पन्न (असि) हुए हो, उन (त्वा) आपको (विश्वेदेवाः=)समस्त विद्वानजन (ब्रह्मणा) बहुत धन से और (दैव्येन) विद्वानों ने किये हुए व्यवहार से (पुष्करे) अन्तरिक्ष में (स्कन्नम्) प्राप्त (द्रप्सम्) मनोहर पदार्थ को (अददन्त) देवें।

भावार्थ–ईश्वर आदेश एवं उपदेश देता है कि जो मनुष्य शुद्ध अन्तःकरण से प्राण एवं उदान के तुल्य और निरन्तर मनोहर विद्या को ग्रहण करते हैं, वे विद्वानों के समान आनन्दित होते हैं।

फिर वह विद्वान कैसा हो?–अगले मंत्र में कहते हैं–

मंत्र संख्या १२

स प्रकेत उभयस्य प्रविद्वान्त्सहस्त्र दान उतबा सदानः।
यमेन ततं परिधिं वयिष्यन्नप्सरस परिजज्ञे वसिष्ठ॥१२॥

पदार्थ=हे मनुष्यों जो (उभयस्य)जन्म एवं विद्याजन्य दोनों का (प्रविद्वान) उत्तम विद्वान (प्रकेतः) उत्तम बुद्धियुक्त (सहस्रदानः) हजारों पदार्थ देने

वाला (उत् वा) अथवा (सदानः) दानयुक्त (यमेन्) वायु अथवा विद्युत के साथ वर्तमान (ततम्) विस्तृत (परिधिम्) परिधि को (वयिष्यन्) खर्च करता हुआ (वसिष्ठः) अति धनवान् (अप्सरसः) अन्तरिक्ष में चलने वाले वायु से (परिजज्ञे) सर्वतः प्रसिद्ध होता है (सः) वह सबको सेवा करने योग्य है।

भावार्थ–जिस मनुष्य का माता-पिता से प्रथम जन्म तथा दूसरा जन्म आचार्य के शिक्षा द्वारा होता है, वही आकाश के भी पदार्थों को जानने वाला उत्पन्न हुआ; पूर्ण विद्वान् अतुल सुख का देने वाला होता है। फिर विद्वान कैसे होते हैं?–इस विषय को अगले मंत्र में कहते हैं–

मंत्र संख्या १३

सन्ने ह जाताविषिता नमोमिः कुम्भ रेतः सिषिचतुः समानम्।
ततो ह मान उदियाय मध्यान्ततो जातमृषिमाहुर्वसिष्ठ॥१३॥

पदार्थ=यदि (जातो) प्रसिद्ध हुए (इषिता) अध्यापक और उपदेशक (नमोमिः) अन्नादिकों से (सन्ने) दीर्घ (ह) ही पढ़ाने-पढ़ने रूप यज्ञ में (कुम्भे) कलश में (रेतः) जल के (समानम्) समान विज्ञान को (सिषिचतुः) सींचे, छोड़ें (ततः, ह) उसी से ही जो (मानः) मानने वाला (उदियान) उदय को प्राप्त होता है (ततः) उस (मध्यात्) मध्य से (जातम्) उत्पन्न हुए (वसिष्ठम्) उत्तम (ऋषिम्) वेदार्थवेत्ता विद्वान को (आहुः) कहते हैं।

भावार्थ–इस मंत्र में वाचक लुप्तोमालंकार है–

जैसे स्त्री और पुरुषों से सन्तान उत्पन्न होता है, वैसे अध्यापक और उपदेशकों के पढ़ाने और उपदेश करने से विद्वान होते हैं।

मंत्र संख्या १४

उक्थमृतं साममृतं विभर्त्ति ग्रावाणं बिभ्रत्प्र बदात्यग्रे।
उपैनमाध्वं सुमनस्यमाना आ वो गच्छाति प्रतृदो वसिष्ठः॥१४॥

पदर्थ=हे (सुमनस्यमानाः) सुन्दर विचार वाले मनुष्यों जो (प्रतृदः) अतीव अविद्यादि दोष के नष्ट करने वाले (ग्रावाणम्) मेघ को सूर्य जैसे वैसे विद्या को (बिभ्रतः) धारता हुआ (वसिष्ठः) अत्यन्त विद्या आदि धन से युक्त (अग्रे) पूर्व (उक्थमृतम्) ऋग्वेद को और (साममृतम्) सामवेद को धारण करने वाले को (विभर्त्ति) धारणकर्त्ता वह औरों को (प्र, वदाति) कहे जो (वः)=तुम लोगों को (आ, गच्छति) प्राप्त हो (एनम्) उसकी तुम (उप, आध्वम्) उपासना करो।

भावार्थ–इस मंत्र में वाचकलुप्तोमालंकार है–

ईश्वर उपदेश देता है कि जो विद्यार्थी सकल वेदवेत्ता, कुशिक्षा और अविद्या को नष्ट करने वाले आप्त विद्वानों की पूर्व अच्छी प्रकार सेवा करके, विद्या प्राप्त करके पुनः पढ़ाता है, उसकी सब ज्ञान चाहने वाले जन विद्या प्राप्त करने के लिए उपासना करते हैं अर्थात् सम्मान करते हैं।

इस सूक्त में पढ़ाने-पढ़ने और उपदेश सुनाने और सुनने वालों के गुण एवं कार्य का वर्णन है न कि सायणाचार्य के भाष्य के अनुसार पौराणिक वशिष्ठ के पुत्रों द्वारा अपने पिता पौराणिक वशिष्ठ का भरतवंशी लोगों से, जिनका राजा सुदास था, स्वागत करने के लिए सुझाव दिया जा रहा है। पाठकबन्धु जरा विचार करें—सायणाचार्य के भाष्य के अनुसार क्या वेद सृष्टि के आदि में ईश्वर द्वारा दिया गया ज्ञान है अथवा इतिहास एवं पुराण की कथा है? यह तो वशिष्ठ एवं वशिष्ठ के पुत्रों के पश्चात् की रचना सिद्ध हो रही है, मानव-सृष्टि के आदि की नहीं।

पं० शिवशर्मा उपदेशक कृत 'दृष्टान्त समुच्चय' से उद्धृत

1. पारसमणि की बटिया

एक महात्मा ने एक साहूकार को पारसमणि की एक ऐसी बटिया दी कि जिसको लोहे से छु जाते ही वह सोना बन जाता था। इसके साथ ही महात्मा ने यह कहा, "मैं तुम्हें यह बटिया सात दिनों के लिये दे रहा हूँ। सात दिन बाद मैं तुमसे यह ले लूँगा।" बटिया पाते ही साहूकार ने सोचा कि मेरे घर में लोहा सिवाय, हँसिया, खुरपी, फावड़ा और कुदार के और कुछ है नहीं और बटिया केवल सात दिन के लिए मिली है। अतः बड़े शहरों से लोहा खरीद कर घर लेता आऊँ फिर उसे बटिया छुआ कर सोने का बना लूँगा। यह सोच एक आदमी कलकत्ता, दूसरा बाम्बे भेज और उन आदमियों से कहा लोहा जल्दी खरीद कर लाना। दो दिन में गाड़ी कलकत्ता आई। दो-ढाई दिन में गाड़ी बम्बई पहुँची। वहाँ लोहा खरीदते उसे गाड़ियों में लदाते हुये दो दिन व्यतीत हो गये। पुनः दो दिन में यहाँ रेलगाड़ियाँ आई। इस भाँति छह दिवस बीत गये। सातवें दिन साहूकार ने मालगाड़ियों से माल उतरवा कर सोचा कि यदि पारस पत्थर छुआ देता हूँ तो तांतियां भील या दराव सरीखे डाकू सब लूट लेंगे, अतः लोहे को घर में भरकर तब पारस पथरी छुआऊँगा। यह सोच वह बैलगाड़ियों में लोहा भराकर घर आया। मजदूर लोहा बैलगाड़ियों से उतार घर में भर रहे थे। यह समय सातवें दिन बारह बजे रात का था, तब तक महात्माजी बटिया लेने आ गये। साहूकार ने महात्माजी का बहुत आदर-सत्कार किया। महात्माजी ने कहा, "वह बटिया लाइये।" साहूकार

ने कहा, "महाराज! अब तक तो मैं लोहा ही खरीदता रहा, कुछ कामल ग़म खाइये। महात्माजी ने कहा, "मैं एक मिनट भी नहीं गम़ खा सकता। बटिया लाइये।।"

साहूकार ने कहा, "महाराज! अच्छा मैं अभी जाकर लोहे में छुआ देता हूँ। "महात्माजी ने कहा, "बस आपकी अवधि हो गई, अब मुझे बटिया दे दीजिये।" साहूकार ने कहा "अच्छा, मैं यह लोहा छुआ लेता हूँ।" महात्मा ने उससे बटिया छीन ली। महाशयो! दृष्टान्त तो यह हुआ, इसका आशय यह है कि जीवात्मा रूप साहूकार को पारमात्मा रूपी महात्मा ने यह शरीर रूपी पारसमणि पत्थर सात दिन के लिये (सात दिन का तात्पर्य यह है कि दिन सात ही होते हैं) दी थी कि इस पारसमणि से माया-जंजाल विषयों से अलग हो मोक्ष रूपी सोना बना ले पर यह जीवात्मा रूपी साहूकार सातों दिन यानी सदैव लोहा ही खरीदता रहा अर्थात् विषयों में ही फँसा रहा। अवधि पूरी होने पर, जब महात्मा इन से, बटिया लेने गया, तब कहते हैं "परमेश्वर दो वर्ष या एक वर्ष यह छह महास की आयु दे, तो हम कुआँ बनवा लें, यज्ञ कर लें, योग साधन कर लें।" परन्तु मृत्यु का समय आने पर उससे एक मिनट की भी मोहलत नहीं मिल सकती। जैसा किसी कवि ने कहा है:–

कल करन्ता आज कर और आज करन्ता अब।
छिन-छिन आयु घटत है फेर करैगा कब?

फल–मनुष्य संसार में ऐसा रमता है कि वह धर्म कर्म के लिए समय नहीं निकाल पाता। ऐसे कामों के लिए वह कल पर निर्भर रहता है। पर यह कल कभी नहीं आता। अत: समय रहते ही धर्म-कर्म भी करना चाहिए।

2. आगे के लिये

एक राज्य में यह नियम था कि जो राजा दस वर्ष राज्य कर लेता था उसे वन भेज दिया जाता था। एक बार एक ऐसे राजा गद्दी पर बैठे। जो इस नियम से बहुत दु:खी थे। वे सोचते रहते थे–यह सारा सामान हमारे पास चार वर्ष के लिय है, दो वर्ष के लिये है, एक वर्ष के लिये है, छह मास के लिये है। इस दु:ख से उनका खाना-पीना सभी बन्द था। एक दिन राजा के यहाँ एक महात्मा आ गये। महात्मा ने कहा, "राजन्, आप इतने दु:खी क्यों हैं?"

राजा ने कहा, "महाराज! छह मास के पश्चात् वन को भेज दिया जाऊँगा और राज्य के भोग पदार्थ छूट जायेंगे। तब मुझे बड़ा कष्ट होगा। इस कारण दु:खी रहता हूँ।" महात्मा ने कहा, "राजन्! इसके लिये इतना दु:ख क्यों कर रहे हो? आपको छह मास के बाद जिस वन को जाना है वहां अभी से पदार्थ धीरे-धीरे भेज देते

ताकि वहाँ कष्ट न हो।"

राजा ने वैसा ही किया और वन में जा आनन्द भोगने लगा। इसका आशय यह है। कि इस जीवात्मारूपी राजा की बदली कुछ दिनों के पश्चात् अन्य योनियों में हुआ करती है। यह प्राणी मनुष्य शरीररूपी पदार्थ छूटता जान कर दुखी होता है कि जाने दूसरे जन्म में मनुष्य शरीर मिले या नहीं। महात्मा ने इसके लिये बतलाया कि यज्ञादि तथा दान धर्म द्वारा क्यों न तू अपने पदार्थ धीरे-धीरे पहुँचा दे ताकि तुम्हें पुनर्जन्म में सम्पूर्ण पदार्थ दोबारा प्राप्त हों।

एक कवि का वाक्य है:–

धर्मार्थेकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते
अजागलस्तनस्येव तस्य जनम निरर्थकम्॥

फल–मनुष्य को इस संसार में रहते हुए धर्म-कर्म करने का समय निकाल लेना चाहिए। अन्यथा परलोक में खाली हाथ जाने यानी धर्म कर्म रहित जाने वाले का कोई महत्त्व नहीं।

3. देह में खुजली

एक सूरदास किसी बड़े भारी मकान के भीतर चला गया। अब बेचारे को बाहर निकलने का मार्ग मिलना कठिन हो गया। परन्तु उसने एक युक्ति सोची कि यदि दीवार पकड़े-पकड़े इसके सहारे मैं चलूँ तो, दरवाजा अवश्य मिल जायगा। उसने ऐसा ही किया, परन्तु दीवार पकड़े-पकड़े जब भी वह दरवाजे के सामने आता था तभी उसकी देह में खुजली उठ आती थी। तब वह दोनों हाथों से दीवार का सहारा छोड़, देह खुजलाने लगता था, इस भाँति एक बार नहीं वरन सैकड़ों वार दरवाजा निकल गया और वह यों ही हाथ मींजता रह गया।

फल–मनुष्य शरीर को पाकर विषय रूपी खुजली में लिप्त न हो, नहीं तो मुक्तिद्वार नहीं मिलेगा।

4. सूली से मुक्ति

एक बार महाराज जनक के मंत्री ने उन से पूछा, "महाराज! देह होते हुये भी आपका विदेह नाम क्यों है?" महाराज ने कहा, "इसका उत्तर हम तुम्हें कुछ दिवस के बाद देंगे।" जब कुछ दिन व्यतीत हुए तो महाराज ने एक दिन उस मन्त्री को भोजन का निमन्त्रण दिया। उन्होंने बिना नमक वाला भोजन बनवाया। मन्त्री के भोजन करने के पहले ही यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि "आज चार बजे मन्त्री को फाँसी दी जायगी।' ढिंढोरा पीटने वाले से कहा कि मन्त्री के द्वार पर

तीन आवाजें लगाये। जिस में मन्त्री सुन लें। ऐसा ही हुआ।

दो बजे महाराज जनक ने उसे भोजन के निमित्त बुलाया। बड़े आदर से ले जाकर भोजन कराया। जब मन्त्री भोजन करके निकला तब महाराज जनक ने कहा, "मन्त्री जी! यदि आप हमें यह बता दें कि किस-किस भोजन में कैसा-कैसा लवण था तो मैं आपको सूली से मुक्त कर दूँ।"

मन्त्री ने उत्तर दिया कि, "महाराज! मुझे मौत के भय से यह ज्ञान नहीं रहा कि किसमें लवण है या किसमें नहीं है। मैं कैसे बताऊँ?" जनक ने मन्त्री से कहा, "सुनिये, आपकी सूली का समय चार बजे था और दो बजे आप भोजन करने बैठे थे। यानी भोजन के समय से मौत के समय तक दो घण्टे जीवन की पूर्ण आशा थी फिर भी आपको लवण का ज्ञान शरीर, स्मणशक्ति, जिह्वा और ज्ञान आदि के होते हुए भी न रहा फिर मुझे तो एक मिनट के लिए भी जीवन का भरोसा नहीं। न जाने कब साँसें अट जाएं। बस जैसे तुम दो घण्टे का समय और देह होते हुय भी विदेह हो गये, इसी प्रकार मिनट भर की भी जीवन की आशा नहीं करता हुआ मैं सदैव विदेह रहता हूँ।"

फल–जो मनुष्य पल भर के लिए जीवन पर भरोसा नहीं करता वह संसार में रहते हुए भी संसार में नहीं रहने के समान है।

5. वैरागी राजकुमार

एक दिन एक राजपुत्र अपने राज्य में घूम रहा था। एकाएक राजपुत्र की दृष्टि एक घर के छत पर पड़ी। वहाँ सोलह वर्ष की एक कन्या स्नान कर अपने केशों को सुखा रही थी। वह मन्त्री की बेटी थी। उसे देख राजपुत्र तुरन्त ही मूर्च्छित हो गया। कुछ काल के पश्चात् जब उसकी मूर्च्छा जागी, तो फिर उसकी दृष्टि उस छत पर गई, परन्तु इसे रूपवती दिखलाई नहीं पड़ी। राजपुत्र अपने महल लौटा आया। घर आकर उसने खाना छोड़ दिया और शोकभवन में जा लेटा! बहुत पूछने पर उसने सच्चा-सच्चा हाल कह सुनाया। राजा अपने पुत्र की यह दशा देख शोक में पड़ गया। राजा की यह दशा देख मन्त्री ने अपनी कन्या से सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा। कन्या ने अपने पिता से कहा, "पिता जी! इसके लिये राजा और राजपुत्र क्यों दु:खी हैं? आप उनसे कह दें कि स्नान, भोजन करें। मेरी बेटी आपसे परसों मिलेगी।" मन्त्री ने यह संदेश राजा व राजपुत्र को सुनाया। राजपुत्र अत्यन्त प्रसन्न हो गया। उसने स्नान, भोजन किया।

मन्त्री अपने घर लौटा, तो उसकी बेटी ने उससे कहा, "पिताजी! थोड़ा जमालगोटा और 80 कूंडे मिट्टी के और 80 रूमाल रेशमी आज ही मँगवा

दीजिये।" पिता ने उसी समय ये सब चीजें मँगवा दीं। रूपवती ने ज्यों ही जमालगोटे का जुलाब लिया कि उसे दस्त पर दस्त आने प्रारम्भ हो गये। रूपवती हर बार उन्हीं कूंडों में शौच करती अधिक दस्त होने से रूपवती का शरीर पीला पड़ गया, वह ऐसी दुबली हो गई कि मानो चारपाई से लग गई थी। वह टूटी सी खाट पर लेटी हुई थी। उसके चारों तरफ मक्खियां भिनक रही थीं। वह मल, मूत्र सने कपड़े पहने थी। उसे अपने पिता से कहा, "पिताजी! अब आप राजपुत्र को ले आइये।"

यह सुन मंत्री महल में गया और उससे अपने घर चलने का आग्रह किया। राजपुत्र सज धजकर बड़ी उमंग के साथ, मन्त्री के साथ चल दिया। जब राज पुत्र ने मन्त्री के घर में कदम रखा, तो उसे कुछ दुर्गन्ध आई। राजपुत्र ने रूमाल से अपनी नाक दबाते हुए कहा, "मन्त्रीजी! दुर्गन्ध क्यों आ रही है?" मन्त्री ने कहा, "पता नहीं, आप चले आइये।" दुर्गन्ध सहन करते हुए जैसे-तैसे राजपुत्र रूपवती तक पहुँचा। रूपवती की यह दशा देख वह दंग रह गया, "अरे रे इसकी क्या दशा हो गई? मैंने परसों इसे उस रूप में देखा पर आज क्या हो गया?" रूपवती ने कहा "राजपुत्र, आइये।" परन्तु राजपुत्र को रूपवती के पास जाना तो, क्या बल्कि वहाँ खड़े रहने में मिनट-मिनट में इतनी तकलीफ़ हो रही थी कि जिसका पारावार नहीं था। रूपवती ने कहा, "राजपुत्र! यदि मुझसे आपकी प्रीति है तब तो यह दासी आपकी सेवा में उपस्थित है। यदि आपको मेरे देह की सुन्दरता से प्रेम था तो वह कूंड़ों में भरी रखी है।" परन्तु इस मूढ़ राजपुत्र को फिर भी बोध न हुआ। कूंडों पर रेशमी रूमाल देख इसे ख्याल हुआ कि खूबसूरती कोई बड़ी उत्तम वस्तु होगी जिसे रेशमी रूमाल से ढका गया है। राजपुत्र ने रूमाल उठाया तो वहाँ शौच देख नाक दबाकर चल पड़ा। इससे उसको ऐसा वैराग्य हुआ कि उसने जीवन पर्यत योग के अङ्गों का पालन किया और मोक्ष प्राप्त किया।

***फल**–सामान्य लोग संसार के पदार्थों की खूबसूरती तथा चमकीलेपन को असलियत समझ लेते हैं और उनमें फँस इस अनमोल जीवन को गँवा देते हैं।*

वि.गो.हा. के चार नये अंग्रेजी प्रकाशन

समीक्षक : डॉ. भवानीलाल भारतीय

आर्यसमाज के शताधिक वर्षीय इतिहास में यद्यपि पर्याप्त साहित्य रचना हुई तथापि अंग्रेजी जैसी विश्व भाषा में साहित्य रचना कम हुई। ऐसे में आर्य साहित्य के यशस्वी प्रकाशक वि.गो.हा. द्वारा चार नये ग्रन्थों का प्रकाशन एक सुखद संवाद है–

1. Swami Dayanand Saraswati In the Eyes of Some Distinguished Scholars
सम्पादकः डॉ विवेक आर्य मूल्य 75

1925 में जब जन्म शताब्दी मनाई गई थी उस समय म. नारायण स्वामी जी के नेतृत्व में उत्कृष्ट साहित्य हिन्दी तथा अंग्रेजी भाषाओं में छपा था। उनमें एक ग्रन्थ में स्वामी दयानन्द के विचारों का विश्लेषण करते हुए उनके जीवन और कार्यों की सटीक विवेचना की गई थी। आज यह पुस्तक दुर्लभ है तथापि युवा लेखक डॉ. विवेक आर्य ने इसका पुनः सम्पादन कर भव्य रूप दे दिया है। आलोच्य पुस्तक में महाकवि टैगोर, दीनबंधु सी.एफ. एण्ड्रज, सिंध के प्रो. ताराचंद गाजरा, दार्शनिक विद्वान् प्रो. सुधाकर, साधु टी.एल. वासवानी, महाराष्ट्र के नेता कलेकर, सेंट स्टीफल कॉलेज के तत्कालीन प्रा. एस. के रुद्र आदि के विचारों को सम्पादक सटिप्पण प्रकाशित किया है। ग्रन्थ पठनीय तथा संग्रहणीय है।

2. OM The Symbol of God (ओम् जप का महत्त्व) ले. जे.एम.मेहता मूल्य 60

योगदर्शन में प्रणव अर्थात् ओम् को परमात्मा का मुख्य वाचक बताया गया है **तस्य वस्वकः प्रणवः** और इस ओम पद वाच्य परमात्मा के शब्द गत अर्थ का चिन्तन करते हुए उसके अर्थ की मन में भावना करने का आदेश है। तदनुसार परवर्ती ग्रन्थों तथा उपनिषद्, गीता, दर्शन आदि में भी ओम् जप का महत्त्व सर्वत्र वर्णित है। माण्डूक्योपनिषद का तो सारा विवेचन ही ओम् के महत्त्व का गान करता है। अव् रक्षणे धातु से बना ओम् भक्त का सदा सर्वदा रक्षक है। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में ओम् की रचना प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ओम् में अ, उ तथा म का समावेश है। जो नाना भावों के द्योतक है। लेखक ने अपने अध्ययन का सार संक्षेप में अंग्रेजी ज्ञाता पाठकों के लिए उपस्थित है।

3. The Essence of Satyarth Prakash लेखक उपर्युक्त मूल्य 60

सत्यार्थप्रकाश ऋषि दयानन्द की प्रतिनिधि रचना है जिसे लेखक ने सत्य और सत्य का विवेक करने के लिए प्रथम 1875 में लिखा पुनः उसका संशोधित संस्करण 1884 में छपा। सत्यप्रकाश को लेखक ने दो खण्डों में विभक्त किया है। पूर्वार्द्ध में दस समुल्लास हैं जो निम्न विषयों का निरूपण करते हैं–ईश्वर के नाम तथा स्वरूप, बालकों का लालन पालन शिक्षा विषय तथा पाठ्यक्रम निर्धारण, गृहस्थ विषय, वानप्रस्थ और संन्यास, राजधर्म की व्याख्या ऋषि ने मनुस्मृति के आधार पर छठे समुल्लास में की है, ईश्वर और जीव–इस दार्शनिक विषय के साथ वेदों का प्रारम्भिक परिचय सृष्टि की उत्पत्ति प्रलय के अतिरिक्त मोक्ष एवं बंधन जैसे दार्शनिक विषय, आचार–अनाचार तथा खानपान का स्वास्थ्य के अनुकूल विचार, यहाँ दस समुल्लास समाप्त होते हैं। चार समुल्लासों का उत्तरार्ध अन्य मतों की समालोचल पर आधारित है। इनमें भारत में प्रचलित मतों का विशद आलोचन किया गया है। बारहवें समुल्लास में जैन बौद्ध तथा चार्वाक आदि नास्तिक या अवैदिक मतों का खण्डन किया गया है। तेरहवें में ईसाई, यहूदी

आदि मध्य एशिया में जन्मे मतों की आलोचना है तो चौदहवें समुल्लास में कुरान पर आधारित इस्लाम की समीक्षा है। इस ग्रन्थ ने लेखक के सत्यार्थ प्रकाश का सरल शैली में विवेचन किया है।

4. Children's Quest लेखक मदन रहेजा मूल्य 60

लेखक यद्यपि एक सफल व्यवसायी हैं, किन्तु वे सुलेखक तथा चिन्तक भी हैं। उन्होंने इस पुस्तक में छात्रों के आध्यात्मिक और संस्कृति विषयक ज्ञान की अभिवृद्धि के लिए प्रश्नोत्तर शैली में कुछ विषय प्रस्तुत किये हैं। इनके द्वारा न केवल बालकों एवं किशोरों के ज्ञान में वृद्धि होगी, वे नई तथा उपदेश प्रद बातें सीखेंगे। आज यह सर्वत्र अनुभव किया जा रहा है कि लौकिक एवं भौतिक शिक्षा के साथ आध्यात्मिक तथा सांस्कृति ज्ञान भी छात्रों को दिया जाना चाहिए। विभिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने अपने-अपने मत प्रस्तुत किये हैं। ऐसी नौतिक शिक्षा भवाग्रह से सर्वथा रहित हो तो सर्व स्वीकार्य होनी चाहिए। रहेजा जी ने इसी प्रकार की पुस्तक पेश की है। जब अनेक प्रदेशों में भगवद्गीता ने नैतिक तथा सदाचार मूलक अंशों को नैतिक पाठों के रूप में रखने की योजना बनी तो अनेक संकीर्ण वृत्ति वाले लोगों ने यह कह कर विरोध किया कि गीता एक मत या सम्प्रदाय विशेष का ग्रन्थ है अतः इसे पाठ्यक्रम में शामिल नहीं किया जा सकता। श्री रहेजा जी की यह पुस्तक सर्वतोभाव से धर्मशिक्षा और नैतिक शिक्षा के लिए उपयोगी है।

पुस्तक समीक्षा-

महर्षि दयानन्द की जरूरत क्यों: सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति आश्वस्ति

-संजय शुक्ल, वैदिक मिशन,
एल 31 आई जी. इन्द्रावती कालोनी, रायपुर (छ.ग.)

आचार्य डॉ. अजय आर्य की प्रथम प्रकाशित पुस्तक "महर्षि दयानन्द की जरूरत क्यों" आर्य समाज के चिंतन को प्रस्तुत करने का सार्थक प्रयास है। लगभग इक्कीस अध्यायों में विभक्त यह चिंतन आर्यसमाज को समझने में सहायक सिद्ध होगा। उल्लेखनीय है कि डॉ. आर्य प्राचीन तथा अर्वाचीन शिक्षा में निष्णात हैं। स्वामी दयानन्द की परंपरा के विद्वान जब अंधविश्वास पर कटाक्ष करते हैं तब अनायास उनकी वाणी तीक्ष्ण हो जाती है। यह पुस्तक इस धारणा के विपरीत है इस पुस्तक में बहुत संतुलित होकर परम्पराओं और मान्यताओं के निहितार्थ को समझाया गया है। स्वामी दयानन्द के विचारों पर दृष्टिपात् करते हुए प्रायः उनके वचनों तथा सिद्धांतों की ही चर्चा होती है। पुस्तक के द्वितीय अध्याय में 'करुणामूर्ति दयानन्द' शीर्षक से लिखे अध्याय में लेखक ने स्वामी जी के प्रेम पूर्ण, निःस्वार्थ, दयार्द्र, परोपकारी तथा ईश्वरनिष्ठ हृदय को अनेक घटनाओं के आलोक से प्रस्तुत करने की कोशिश की है। लन्दन की लब्धप्रतिष्ठित लेखिका

डॉ. कविता वाचक्नवी का मानना है कि यह पुस्तक सामान्यजन को आर्यसमाज के सिद्धांतों व महर्षि के जीवन का प्रथम परिचय करवाने वाली है। **अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त संस्कृत तथा प्राचीन भारत के ज्ञान विज्ञान के अन्वेषण कर्ता आचार्य डॉ. महेशचंद शर्मा जी ने इस कृति के संबंध में लिखा है–**श्रवण-मनन, पठन-पाठन तथा शिक्षण-व्याख्यान की उर्वर पृष्ठभूमि पर युवा लेखक प्रसिद्धि प्राप्त कई शब्दों की अनर्थकारी धारणाओं को ध्वस्त करते दिखाई देते हैं। आचार्य डॉ. आर्य की प्रस्तुत कृति भारतीय सांस्कृतिक जिज्ञासाओं का समाधान करती हुई प्रतीत होती है। कवि और लेखक तो निरंकुश कहे गए हैं। शायर, सिंह और सपूत लकीर के फकीर नहीं होते। डॉ. अजय आर्य भी बहुत अधिक ग्रन्थियों से बंधे प्रतीत नहीं होते। पंचायतन पूजन के रूप में माता-पिता, आचार्य, अतिथि और परमेश्वर का उल्लेख न केवल सराहनीय अपितु अनुकरणीय भी है। जीवित माता-पिता को सेवा और श्रद्धापूर्वक तृप्ति प्रदान करना वस्तुतः सच्चा श्राद्ध और तर्पण है। ऐसा मानने में शायद ही कोई समस्या हो। इसी तरह समाज के नैतिक उत्थान हेतु पतिव्रता स्त्री के समान पत्नीव्रत पतियों का संकेत करके डॉ. आर्य ने युवा पाठकों का समुचित मार्गदर्शन किया है। इस कृति से सांस्कृतिक मूल्यों के सन्दर्भ में आश्वस्ति मिलती है।

महर्षि दयानन्द की ज़रूरत क्यों? करुणामूर्ति दयानन्द, गायत्री मन्त्रपरमात्मा के नौ नाम; लक्ष्मी पूजा के मायने, प्रजापति का उपदेश, गणपति बनाम सफलता का मन्त्र, होली, भक्तों की विजय का पर्व, किले में वास, स्वादु भोजन और तपोमय जीवन तथा श्राद्ध एक वैदिक रहस्य शीर्षक से लिखे गए लघु लेख एक विराट चिंतन तथा उपयोगी जीवन मूल्यों की ओर इशारा करते हैं। प्रत्येक लेखक प्रत्येक प्रसंग को बड़ी ही सावधानी तथा रोचकता के साथ पाठकों के हाथ में प्रस्तुत करते हैं। लेखन शैली बहुत ही स्पष्ट तथा दिलों को छूनेवाली है। इस पुस्तक को पढ़ने के पश्चात जो आर्यसमाज के प्रति कुछ लोगों के मन में एक नकारात्मक धारणा बनीं हुई है उसे ध्वस्त होते देखा जा सकता है।

पंचमहायज्ञः स्वर्ग की सीढ़ियाँ, दुनिया में रहना किस तरह? ईशावास्यमिदं सर्वम्: सर्वव्यापक ईश्वर, धर्म क्या है? सत्य से जीवन विश्वसनीय बनता है, राम और कृष्ण से क्या सीखें? क्रोधः नरक का द्वार है, आओ वृद्ध बनें। अन्धविश्वास से मुक्ति, माँ तुझे प्रणाम आदि निबंध तो बार-बार पढ़े जा सकते हैं। ईश्वर की सर्वव्यापकता के सम्बन्ध में सैद्धांतिक चर्चा करने की अपेक्षा लेखक ईश्वर को सर्वव्यापक मानने के लाभ गिनाते हैं। लेखक का मानना है कि जब आराध्य को सर्वत्र मानते हैं तब हमारा चित्त उदार तथा सत्यनिष्ठ बनता है। ईश्वर को एकदेशी मानने से व्यक्ति के मन में कहीं न कहीं ईश्वर का भय कम हो जाता है और

वह चालाकी करने लगता है। यज्ञ के सन्दर्भ में जब लेखक स्वर्ग की चर्चा करते हैं उनका इशारा किसी अदृश्य लोक की ओर न होकर प्राप्तव्य सुख की ओर ही होता है, जैसा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लिखा कि स्वर्ग विशेष का नाम सुख है।

यह पुस्तक किन्हीं आर्येतर विषयों पर भी सामग्री प्रस्तुत करती है। गणपति, लक्ष्मी: पूजा, अंधविश्वास, दुनिया में रहना किस तरह? आदि निबंध आर्यसमाज के नवोदित उपदेशकों तथा पुरोहितों को भी सरल सामग्री देगें, जिसका उपयोग वे अपने व्याख्यानों तथा पौराणिक घरों में कराये जाने वाले कर्मकांडों के दौरान भी कर सकते हैं। दीपावली, होली तथा गणपति पूजा के अवसर पर अनेक पुरोहितों को कर्मकांड के लिए पौराणिक परिवारों में जाना पड़ता है। अवैदिक से दिखने वाले विषयों की संगति वैदिक विषयों के साथ बड़ी ही कुशलता के साथ की गई है। एक स्थल पर कुरान को भी उद्धृत किया गया है। लेखक गुरुकुल प्रभात आश्रम, मेरठ (उ.प्र.) के स्नातक हैं। पुस्तक लेखन के उद्देश्य को लेकर लेखक ने स्पष्ट किया है।

मेरे विचारों में कुछ भी मौलिक नहीं है। जो कुछ भी यहाँ श्रेष्ठ है, वह सब गुरुजनों का ही है। इस पुस्तक के प्रकाशन का उद्देश्य भी केवल इतना ही है कि वेद, महर्षि तथा गुरुजनों के श्रेष्ठ, उत्तम विचार जनजन तक पहुँचे। श्रोताओं का आग्रह था कि इन वैदिक विचारों को परिवार के अन्य जनों तक पहुँचाने की कोशिश की जानी चाहिए। पुस्तक में अन्य मतों के उदाहरणों तथा उद्धरणों के सम्बन्ध में कुछ विद्वज्जनों को आपत्ति भी हो सकती है। इन उद्धरणों का उद्देश्य अन्य मतों का महिमा मंडन नहीं है। अपनी बात उन तक पहुँचाने की कोशिश भर है। मैं व्यक्तिगत तौर पर चाहता हूँ आर्यजनों के विचार आर्येतर जनों तक भी पहुँचे। जिस तरह महर्षि ने ब्रह्मा से लेकर जैमिनी, ऋषि मुनियों की परंपरा को प्रामाणिक माना तथा उसके प्रचार को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। उसी तरह इस पुस्तक का ध्येय गुरुजनों के विचारों को जन-जन तक पहुँचाना मात्र है।

कुछेक टंकणगत अशुद्धियों को छोड़ दिया जाए तो यह पुस्तक बहुत ही आकर्षक और संग्रहणीय है। इसे आर्यजन अपने मित्रों तथा संबंधियों को भेंट कर सकते है। यह पठनीय है, जो जिज्ञासा उत्पन्न करती है। वेद की सनातन परंपरा के साथ पाठकों का संबंध जोड़ती है।

स्वामी आर्यवेश जी (प्रधान, सार्वदेशिक सभा) आचार्य आनंद पुरुषार्थी (अंतर्राष्ट्रीय वैदिक प्रवक्ता), स्वामी धर्मानन्द सरस्वती (गुरुकुल आश्रम आमसेना उड़ीसा, डॉ. मिथलेश आर्य (मुंबई), आचार्य नरदेव आर्य (हॉलेंड) स्वामी ओंकारानन्द सहित अनेक आर्य विद्वानों ने पुस्तक का स्वागत किया है।

अक्टूबर 2014 में प्रकाशित होने वाला महत्वपूर्ण साहित्य

ऋषि दयानन्द का तत्त्व-दर्शनः पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

अनुवादक **डॉ रूपचन्द्र 'दीपक'** **पृष्ठः 368, मूल्यः 300**

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय लिखित 'Philosophy of Dayanand' का हिन्दी अनुवाद। यह ग्रन्थ निराला है। इसकी शैली भी निराली है। सम्पूर्ण आर्य साहित्य में हमारे किसी भी दार्शनिक साहित्यकार ने इतनी सहज, सरल तथा स्वाभाविक युक्तियों से वैदिक सिद्धान्तों का मण्डन नहीं किया जो आपको इस ग्रन्थ में मिलेगा। उपाध्याय जी की कुछ विषयों पर मौलिक व्याख्याएँ अत्यन्त हृदय-स्पर्शी हैं जैसे–मायावाद, स्वप्नवाद, जगत् मिथ्या, जड़पूजा, जातिवाद, मनुष्य पूजा, अंधविश्वास, पाप–पुण्य, अद्वैतवाद, वर्ण व्यवस्था ईश्वर की सत्ता, पितृ यज्ञ, राजधर्म, अवतारवाद, प्रकृति आदि। इन सब सिद्धान्तों पर उपाध्याय जी की लेखनी का लोहा सबने माना है।

दृष्टान्त समुच्चयः श्री शिवशर्मा 'उपदेशक' **पृष्ठः 244, मूल्यः 125**

दृष्टान्त कठिन से कठिन विषय को भी किसी भी जिज्ञासु को बहुत सरलता से समझा देता है। इस पुस्तक में कोई व्यर्थ हंसी दिल्लगी या समय खोने के दृष्टान्त नहीं हैं, बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा प्राप्त इन रत्नों को देख और पढ़कर आपको अवश्य ही आनंद प्राप्त होगा और श्रेष्ठ जीवन जीने की प्रेरणा मिलेगी।

The Sanskar Vidhi by Swami Dayanand Pages: 416, Price Rs. 325.00
English Translation by Dr. Satya Prakash Beegoo (Mauritius)

Ceremonial rites and rituals occupy a place of most importance in the life of a devout Hindu. Present book provides simple and adequate knowledge of different sanskaras of Vedic traditions. This Scholarly work envisage how sacraments have the power to purify and enlighten us from within.

वेद के पाठक सावधान! शिवनारायण सिंह गौतम

विश्वविद्यालयों में पढ़ायी जाने वाली पुस्तकों में वेद एवं वेद संबंधी अनेक भ्रान्तिमूलक विषयों को सम्मिलित किया गया है जो कि सत्य से बहुत दूर हैं। ऐसी ही कुछ गलत धारणाओं तथा कुछ पाश्चात्य एवं भारतीय लेखकों व इतिहासकारों द्वारा वेदों पर किये गये आक्षेपों का समाधान इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है। **पृष्ठः 268, मूल्यः 150.00**

ikfIr LFkku% fot;dqekj xkfoUnjke gkIkuUn
4408] ubZ IMd] fnYyh&6] nwjHkk"k 23977216] 65360255
Email: ajayarya16@gmail.com Web: www.vedicbooks.com

फरवरी 2014 में प्रकाशित उपयोगी साहित्य

ऋषि दयानन्द के भक्त, प्रशंसक और सत्संगी
डॉ. भवानीलाल भारतीय **रु. 95.00**

प्रस्तुत ग्रन्थ में लेखक ने ऐसे 50 व्यक्तियों के जीवनवृत तथा स्वामी दयानन्द से इनके पारस्परिक सम्बन्धों की विवेचना की है जो भक्त, प्रशंसक तथा सत्संगी इन तीन वर्गों में परिगणित किये जा सकते हैं।

OM The Symbol of God by Sh. J.M. Mehta **Rs. 60.00**

In this small book, an attempt has been made to describe briefly, various aspects of OM. These inter-alia include its meanings, the origin, its common usage and description in various holy scriptures and its link-age with other faiths etc. Some methods of meditation and Om JAPA are also stated.

Children's Quest by Madan Raheja **Rs. 60.00**

Children accept the beliefs what we teach them in their childhood and they follow the same beliefs life long. It's our duty to teach them properly about our Indian culture and ancient religious beliefs.

The Essence of Satyarth Prakash by J.M. Mehta **Rs. 60.00**

This work can be trated as a comprehensive introduction. It is suggested that after reading this book, the reader should go to the original work of Swami Dayanand for full benefit and appreciation of the light brought out by him from the Vedas and the later scriptures.

Swami Dayanand Saraswati In the Eyes of Some Distinguished Scholars **Edited by Dr. Vivek Arya** **Rs. 75.00**

This book is a collection of views of few among those distinguished scholars and fans of Swami Dayanand Saraswati, who published their views on the asupicious occasion of Birth Century year of Swamiji.

महर्षि दयानन्द की ज़रूरत क्यों? डॉ. अजय आर्य **रु. 50.00**

व्यवहारिक धरातल पर वैदिक सिद्धान्तों की गवेषणा। ऋषि दयानन्द के विचारों की आधुनिक युग में प्रासंगिकता को समझने के लिए डॉ. अजय आर्य के विचार महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

वैदिक सिद्धान्तों पर सहेलियों की वार्ता पं. सुरेशचन्द्र वेदालंकार **रु. 25.00**

इस पुस्तक का यही उद्देश्य है कि यदि वैदिक सिद्धान्त हमारे मस्तिष्क में बैठ जाएँ तो हम वैदिक और अवैदिक सिद्धान्तों में अन्तर को समझने में समर्थ होंगे और इनके प्रचार-प्रसार द्वारा ही हमारे सभी कष्ट दूर हो सकते हैं।

प्रकाशक-अजयकुमार, मुद्रक-अजयकुमार, स्वामी-अजयकुमार, गोविन्दराम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली-6, अजयकुमार द्वारा सम्पादित, प्रिंटर्स-अजय प्रिंटर्स, 1586/C-13, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 में प्रिंट करा, वेदप्रकाश कार्यालय, 4408, नई सड़क, दिल्ली-6 से प्रसारित किया। न्यायक्षेत्र-दिल्ली।